5.3.2.1. आधुनिकता का अर्थ

आधुनिकता के अर्थ के सम्बन्ध में भी विचारों की भिन्नता वैसी ही है जैसी उत्तर आधुनिकता के सम्बन्ध में है। आधुनिकता को मार्क्स, वेबर आदि ने ऐतिहासिक काल के रूप में समझा है, एक ऐसा युग जो मध्य-युग या सामन्तवाद के बाद मानव इतिहास में आया। परम्परागत समाजों के धार्मिक, आर्थिक विचारों और परिस्थितियों के स्थान पर नवीन, वैज्ञानिक और बहुआयामी चिन्तन तथा गतिविधियाँ आधुनिक युग की विशेषताएँ बनीं। बुद्धि और तर्क देकार्त से लेकर ज्ञानोदय काल तक सत्य की खोज और व्यवस्थित ज्ञान की आधारशिला रहे हैं। ज्ञानोदय के सिद्धान्त ही अमेरिकी और फ्रांसीसी क्रान्ति की मुख्य प्रेरणा थे, जिनसे सामन्तवाद का अन्त हुआ और एक समतामूलक सामाजिक व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त हुआ। वैज्ञानिक दृष्टिकोण और धर्मनिरपेक्षता आधुनिकता के मुख्य आधार थे।

5.3.2.2. आधुनिकता की विशेषताएँ

आधुनिकता व्यक्ति के आत्म को चेतन, तार्किक, स्वायत्त और सार्वभौमिक मानती है। व्यक्ति को अपना और विश्व का ज्ञान मानव-मस्तिष्क के उच्चतम रूप 'बुद्धि' द्वारा प्राप्त होता है। बुद्धि द्वारा उत्पन्न वस्तुनिष्ठ ज्ञान को प्रकट करने की विधि 'विज्ञान' है। अत: विज्ञान जिस वस्तुनिष्ठ ज्ञान का उत्पादन करता है वही 'सत्य' है। विज्ञान द्वारा उत्पादित ज्ञान या सत्य हमेशा पूर्णता और प्रगति की ओर उन्मुख होता है। इस प्रकार सभी मानवीय और प्राकृतिक क्रिया-व्यापार विज्ञान द्वारा समझे-समझाए जा सकते हैं तथा उन्हें विकसित-परिष्कृत किया जा सकता है। बुद्धि से संचालित विश्व में 'सत्य' ही कल्याणकारी होता है। अच्छाई और सत्य में कोई विरोध नहीं हो सकता। आधुनिक चिन्तन के अनुसार भाषा या अभिव्यक्ति के माध्यम भी वस्तुनिष्ठ और तार्किक होने चाहिए। तार्किक होने के लिए ज़रूरी है कि भाषा पारदर्शी और स्पष्ट हो। यह ऐसी हो कि केवल तार्किक बुद्धि द्वारा प्रस्तुत वास्तविक और गोचर जगत् को ही प्रकट करे। हमारे अवबोध की वस्तुओं तथा उन्हें नाम देने वाले शब्दों के मध्य ठोस और वस्तुनिष्ठ सम्बन्ध होना अनिवार्य है।

डेविड लायन ने आधुनिकता की उपलब्धियों को विस्मयकारी बताते हुए निम्नलिखित विशेषताओं को रेखांकित किया है –

(1) विभेदीकरण : औद्योगीकरण ने श्रम-विभाजन को पैदा किया जिससे श्रमिक अनेक रूपों में विशेषज्ञता के आधार पर विभाजित हुए।

(2) तार्किकीकरण : वैज्ञानिकों की अनुसंधान विधियाँ, पूंजीवादियों के लाभ-हानि के विवरण तथा नौकरशाही के नियम और पदानुक्रम, सभी की सार्थकता तार्किक होने में निहित थी।

(3) शहरीकरण : ग्रामीण क्षेत्रों से काम की तलाश में भारी संख्या में जनसंख्या का पलायन हुआ, जिससे शहरीकरण में वृद्धि हुई।

(4) अनुशासन : आधुनिकता में नियंत्रण की भावना भी थी, क्योंकि पूंजीवादी और औद्योगिक समाज में अपराधों को रोकने में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका थी।

(5) धर्मनिरपेक्षता : धर्म से संचालित समाज के स्थान पर लोकतान्त्रिक मूल्यों पर आधारित धर्मनिरपेक्ष समाज की स्थापना आधुनिकता का लक्ष्य था।

5.3.2.3. आधुनिकता और ज्ञानोदय की असफलता

आधुनिकता की उपलब्धियों और उनसे पैदा हुए क्रान्तिकारी सामाजिक परिवर्तनों के बाद भी विद्वानों ने अनेक आधारों पर आधुनिकता की आलोचना की है। दो विश्व-युद्धों की विनाशलीला ने आधुनिक विश्व-दृष्टि पर प्रश्न-चिह्न लगा दिया था। पूंजीवादी औद्योगीकरण में किसानों, मज़दूरों और कलाकारों का शोषण हुआ, उनकी परेशानियाँ बढ़ीं। साम्राज्यवादी उपनिवेशवाद के साथ-साथ नियंत्रण और वर्चस्व के साधनों को वैधता प्रदान करने वाली संस्थाओं ने लोगों के दु:खों को बढ़ाने का काम किया।

आधुनिक्ता के निर्माण की प्रक्रियाओं – पूंजीवाद, साम्राज्यवाद, औद्योगीकरण, शहरीकरण, उपभोक्तावाद तथा सांस्कृतिक विभेदीकरण के निराशाजनक वातावरण में अनेक चिन्तकों ने सामाजिक-जीवन के नए दृष्टिकोण की आवश्यकता अनुभव की। बीसवीं सदी में आधुनिकता की उपलब्धियों के साथ-साथ मृत्यु शिविरों और सेना की क्रूरता, विश्व युद्धों की विनाशलीला, हिरोशिमा और नागासाकी के परमाणु विस्फ़ोटों का संहारक अनुभव आदि घटनाओं ने आधुनिकतावाद के वादोंको झूठा साबित कर दिया था और मानवता निराशा में घिर गई थी। निराशा के इस माहौल से विचलित होकर अडोर्नो और होर्खेमर ने कहा था कि "आधुनिकता की ज्ञानोदयी परियोजना स्वयं के विरुद्ध खड़ी होने के लिए अभिशप्त है"। उन्होंने हिटलर की जर्मनी और स्टालिन के रूस में मानवता के क्रंदन को आधुनिकता की व्याख्या का आधार बनाया और लिखा कि मनुष्य की मुक्ति का अभियान उसके दमन की सार्वभौमिक व्यवस्था बन गया है। मानव-मुक्ति के तर्क के पीछे छद्म रूप में वर्चस्व और दमन का तर्क छुपा हुआ है। उत्तर आधुनिकतावादियों ने तर्क दिया कि हमें मानव-मुक्ति के नाम पर लागू की गई ज्ञानोदय परियोजना को पूर्ण रूप से त्याग देना चाहिए क्योंकि इतिहास ने सिद्ध कर दिया है कि आधुनिकता की परियोजना में दृष्टि और व्यवहार दोनों की कमी है।

5.3.3 उत्तर आधुनिकतावाद : परिभाषा की समस्या

ज्याँ फ़्रांस्वा ल्योतार की पुस्तक 'द पोस्टमॉडर्न कंडीशन' (मूल फ़्रांसीसी 1979 और अंग्रेज़ी संस्करण 1984 में प्रकाशित) के प्रकाशन के साथ ही बौद्धिक जगत् में उत्तर आधुनिकता की अवधारणा विचार के केन्द्र में आ गई। उत्तर आधुनिक अवस्था को पश्चिमी समाजों में ज्ञान के संकट के रूप में प्रस्तुतकिया गया है। लेकिन 'उत्तर आधुनिकतावाद' को परिभाषित करना अत्यन्त कठिन है। एक तो यह ऐसा पदबन्ध है जो कला, स्थापत्य, संगीत, साहित्य, समाजशास्त्र, सिनेमा, फ़ैशन और प्रौद्योगिकी जैसे अनेक अनुशासनों में प्रयुक्त होता है और सभी के लिए उसका अपना अर्थ और व्यवहार है। दूसरा, उत्तर आधुनिकतावाद एक बहुस्तरीय और बहु आयामी

स्थिति है जिसके अन्तर्गत उत्तर संरचनावाद, नव मार्क्सवाद, नव इतिहासवाद, विखण्डन, स्त्रीवाद और पर्यावरणवाद जैसे कई अध्ययनों की चिन्ताएँ शामिल हैं। इसलिए इसकी पूर्ण परिभाषा सम्भव नहीं है, यह स्वयं पूर्णता या समग्रता का विरोधी है। आइए, उत्तर आधुनिकतावाद को समझने के लिए सबसे पहले इसके विकास-पथ का अवलोकन करें।

5.3.3.1. उत्तर औद्योगिक समाज

डेनियल बेल ने अपनी पुस्तक 'द कमिंग ऑफ़ पोस्ट-इंडस्ट्रियल सोसायटी' (1973) में समकालीन समाज का विश्लेषण करते हुए औद्योगिक और उत्तर औद्योगिक युग के बीच के अन्तर को स्पष्ट किया है। उसके अनुसार आधुनिक युग में औद्योगिक विकास अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया है। औद्योगिक युग की अर्थव्यवस्था सदियों से पूंजीपति उद्योग-मालिकों, श्रमिकों और कार्मिकों तथा वितरण-व्यवस्था के तंत्र पर आधारित है। अब इसमें परिवर्तन के ठोस और स्पष्ट संकेत मिल रहे हैं। इन परिवर्तनों की दिशा यह है कि अर्थव्यवस्था के केन्द्र में उद्योग-मालिकों, व्यापारी वर्ग तथा उद्योग कार्यकारियों का स्थान वैज्ञानिक, गणितज्ञ, अर्थशास्त्री और नई बौद्धिक प्रौद्योगिकी के इंजीनियर के रूप में 'नए आदमी' लेंगे। समाज अब वस्तु उत्पादन की पद्धति से आगे बढ़ गया है और भविष्य का समाज 'सेवा-समाज' होगा। सेवा-क्षेत्र के विकास और उसके सामाजिक महत्त्व के कारण श्रम के रूप में भी परिवर्तन होगा। उपभोक्ता उत्पादन से अधिक महत्त्वपूर्ण हो जाएगा। मशीनों से अधिक कार्य और सामाजिक महत्त्व तकनीकी विशेषज्ञता और विज्ञान का होगा। इसी प्रकार समाज में नैतिकता का निर्धारण और सांस्कृतिक उत्पादन वैज्ञानिक विधियों के अनुसार होंगे। उत्तर औद्योगिक समाज के निर्माण में विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अर्थव्यवस्था का समन्वय आधारभूत तथ्य है। उत्तर औद्योगिक समाज उत्तर आधुनिक सैद्धान्तिकी की जन्मभूमि है।

5.3.3.2. उत्तर आधुनिक

'उत्तर आधुनिक' (पोस्टमॉडर्न) शब्द का प्रयोग पहली बार अंग्रेज़ चित्रकार जॉन वॉट्किन्स चैपमैन ने 1870 के आस-पास किया था। उसने अति आधुनिक और अवाँ-गार्द ('अवाँ-गार्द' मूल फ्रांसीसी शब्द जिसका शाब्दिक अर्थ है अग्रिम रक्षक। पारिभाषिक रूप से उन लोगों या कार्यों के लिए रूढ़ है जो कला, संस्कृति और समाज के सन्दर्भ में प्रयोगात्मक, रूढ़ि-विरोधी और आमूल परिवर्तनवादी रुख़ अपनाते हैं) चित्रों को 'उत्तर आधुनिक चित्र' कहा जो फ्रांसीसी अभिव्यंजनावाद से आगे की शैली के चित्र थे। समकालीन यूरोपीय संस्कृति में मूल्यों की गिरावट और नकारवाद के सन्दर्भ में जर्मन लेखक रूडोल्फ़ पेन्विट्ज़ ने अपनी पुस्तक 'यूरोपीय संस्कृति संकट' (1917) में 'उत्तर आधुनिक मनुष्य' को राष्ट्रवादी, सेनावादी और आभिजात्य मूल्यों का अवतार बताया था। द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद डी.सी. सॉमरवेल ने 1947 में ब्रिटेन के इतिहासकार अर्नोल्ड टॉइन्बि की पुस्तक 'इतिहास का अध्ययन' (अ स्टडी ऑफ़ हिस्ट्री) की रूपरेखा प्रस्तुत करते हुए इतिहास के आधुनिक युग से 'उत्तर आधुनिक' प्रस्थान का संकेत किया था। बाद में स्वयं टॉइन्बि ने 'उत्तर आधुनिक युग' के रूप में 1875 से नए

ऐतिहासिक काल-खण्ड की शुरुआत मानी है। इसी प्रकार अनेक विद्वानों ने अलग-अलग अनुशासनों और अलग-अलग सन्दर्भों में 'उत्तर आधुनिक' पद का प्रयोग किया है।

उत्तर आधुनिक पदबन्ध को समझने के बाद एक अन्य समस्या का समाधान भी करना होगा तभी हम उत्तर आधुनिकतावाद के किसी ठोस और संतोषप्रद अर्थ तक पहुँचपाएँगे। यह समस्या समकालीन वैचारिक और साहित्यिक परिदृश्य में विमर्श और सन्दर्भ के अनुसार 'उत्तर आधुनिक' पदबन्ध के अर्थ में पाए जाने वाले अन्तर से सम्बन्धित है। 'उत्तर आधुनिक' के परिवर्तनकारी अर्थ के मद्देनज़र इसके तीन मुख्य रूपों – उत्तर आधुनिकता, उत्तर आधुनिक संस्कृति, और उत्तर आधुनिक सैद्धान्तिकी – में अवधारणात्मक अन्तर समझना ज़रूरी है।

5.3.3.3. उत्तर आधुनिकता

'उत्तर आधुनिकता' यह सूचित करती है कि यह ऐतिहासिक क्रम में आधुनिकता के बाद की स्थिति है। यह आधुनिकता से जुड़े हुए सामाजिक रूपों के विघटन को दर्शाती है। यह 'उत्पादन' को पूंजीवादी पद्धति के केन्द्र से हटाकर उपभोग और सेवा-क्षेत्र को इसके केन्द्र में स्थापित करती है। यह वस्तुओं के उत्पादन की जगह सूचनाओं के उत्पादन पर बल देती है। इस स्थिति के अन्तर्गत अब संगठित उत्पादन का स्थान असंगठित उत्पादन ने ले लिया है। प्रौद्योगिकी, जनसंचार, दूरसंचार तथा यातायात के साधनों के आशातीत विकास ने दुनिया को 'राष्ट्रीय' से 'वैश्विक' में बदल दिया है। ल्योतार कहता है कि कोई भी कार्य आधुनिक तभी बनता है जब पहले वह उत्तर आधुनिक हो, क्योंकि उत्तर आधुनिकतावाद अपने अन्त के समय में आधुनिकतावाद नहीं है, बल्कि इसके आरम्भ में है, अर्थात् उस समय जब यह सामने नहीं आ सकने वाले को सामने ले आता है और यह स्थिति अपरिवर्तनीय है। इस प्रकार उत्तर आधुनिकतावाद आधुनिकता की नई पुनरावृत्ति है और पुनरावृत्ति की यह माँग सदैव बनी रहती है।

5.3.3.4. उत्तर आधुनिक संस्कृति और उत्तर आधुनिकसैद्धान्तिकी

उत्तर आधुनिकतावाद का प्रयोग सांस्कृतिक सिद्धान्त के एक विशेष रूप के लिए भी किया जाता है। कभी इसे उत्तर आधुनिक के बारे में एक सिद्धान्त की तरह, तो कभी इसे अपने आप में उत्तर आधुनिकता का सिद्धान्त कह कर समझने की कोशिश की जाती है। फ्रेड्रिक जैमसन के अनुसार उत्तर आधुनिकतावाद पूंजी के उस विशुद्ध रूप का प्रतिनिधित्व करता है जो अभी तक प्रकट नहीं हुआ है अर्थात् उत्तर आधुनिकतावाद अब तक के उन अपण्यीकृत क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है जहाँ पूंजी का असाधारण प्रसार नहीं हुआ है। इस कारण सौन्दर्यात्मक उत्पादन वस्तुओं के उत्पादन में समाहित कर लिया गया है। इसीलिए अब जो संस्कृति पैदा हो रही है वह सपाट और सतही है तथा अतीतगामिता (नॉस्टैल्जॅ) और नक़ल (पैस्टीश) इसकी विशेषताएँ हैं। इतना ही नहीं संस्कृति अब पूंजीवादी समाज की आर्थिक गतिविधियों को छिपाने वाली वैचारिकता नहीं है, यह अपने आप में आर्थिक गतिविधि है, और शायद सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि।

जैमसन के अनुसार उत्तर आधुनिकता 'वृद्ध पूंजीवाद का सांस्कृतिक तर्क' है। 'उत्तर आधुनिकतावाद' उत्तर आधुनिकता की संस्कृति है अर्थात् विकसित पूंजीवादी संस्कृति का एकआन्दोलन। सांस्कृतिक क्षेत्र में आधुनिकता की निश्चयात्मकता और विशिष्टतावाद को अस्वीकार करते हुए एक 'नई संवेदनशीलता' का उद्भव हुआ। सूज़न सोंटैग, लेज़्लि फ़ीडलर और इहाब हसन जैसे प्रारम्भिक उत्तर आधुनिकतावादी 'उत्तर आधुनिक संस्कृति' को आधुनिकता के दमनकारी रूपों के विरोध की दिशा में एक सकारात्मक विकास मानते थे। 1960 के दशक में सामने आए विभिन्न सांस्कृतिक माध्यम जैसे मल्टीमीडिया प्रदर्शन, पॉप संगीत, रॉक संगीत, फिल्म संस्कृति आदि को परम्परागत माध्यमों जैसे कविता, कहानी आदि से ऊपर और अच्छा माना गया। आधुनिकता की उपलब्धियों की आलोचना तथा नए सामाजिक-सांस्कृतिक रुझानों को समझने के लिए पाश्चात्य बौद्धिक जगत् में नए विचारों और नए तरीक़ों का प्रस्फुटन हुआ। मिशेल फ़ूको, ज्याँ फ़्रांस्वा ल्योतार और ज़्यॉक देरिदा इस नवीनता के मुख्य प्रवर्तक बने और उत्तर आधुनिकसैद्धान्तिकी का आविर्भाव हुआ।

5.3.4 उत्तर आधुनिकतावाद की मुख्य स्थापनाएँ और अवधारणाएँ

साहित्य और कला के काल-विभाजन और नामकरण की समस्या प्राचीन काल से चली आ रही है। विभिन्न कला-आन्दोलनों और प्रवृत्तियों की पहचान और परिभाषा भी पर्याप्त विवाद का विषय रहा है। लेकिन 'उत्तर आधुनिकतावाद' के साथ यह समस्या कुछ अधिक और विशिष्ट है। यह मुख्य रूप से सन्देहवादी दृष्टि से समकालीन दुनिया को देखता है। इस परिघटना को समझने के लिए इसकी अस्थिर, खण्डित और विरोधाभासी प्रकृति को समझना अनिवार्य है। उत्तर आधुनिकतावाद की पृष्ठभूमि जान लेने के बाद इसकी मुख्य स्थापनाओं और सम्बन्धित अवधारणाओं को समझने की आवश्यकता है। आइए, इसकी मुख्य विशेषताओं और अवधारणाओं के आधार पर समझने का प्रयास करें कि यह क्या है ? एक परिप्रेक्ष्य, एक मनोदशा, एक प्रवृत्ति, एक आन्दोलन, एक स्थिति या कि एक ऐतिहासिक काल-खण्ड ? अथवा इन सब से अलग कुछ और ?

5.3.4.01. महा वृत्तान्तों की अविश्वसनीयता

महान् आख्यान या महा वृत्तान्त सार्वभौमिक मूल्यों और पूर्ण सत्य के आश्वासनों पर आधारित सिद्धान्तों को कहा जाता है जो विभिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक घटनाओं का एकताबद्ध, पूर्ण और व्यापक विवरण प्रस्तुत करते हैं।

ल्योतार ने उत्तर आधुनिक दशा की व्याख्या में तर्क दिया है कि हम ऐसे समय में आ गए हैं जिसमें 'महान् आख्यान' संकट में हैं और समाप्त हो रहे हैं। काण्ट, हीगल और मार्क्स के दार्शनिक सिद्धान्त अपनी प्रासंगिकता खो चुके हैं। अब यह नहीं माना जा सकता कि इतिहास प्रगतिशील है, ज्ञान मनुष्य को सभी बन्धनों से मुक्त करता है और सभी तरह के ज्ञान-अनुशासनों में अन्तर्निहित एकता है। ल्योतार उत्तर आधुनिकता को नई प्रौद्योगिकी की ओर बढ़ने की प्रक्रिया के रूप में देखता है जिसमें सारा ध्यान भाषा के मुद्दों पर केन्द्रित है – कंप्यूटर की भाषा, संचार के सिद्धान्त, भाषा-दर्शन आदि। ल्योतार जिन दो महान् आख्यानों पर अधिक आक्रमण करता है उनमें एक

है मानवता की उत्तरोत्तर मुक्ति (ईसाई धर्म का उद्धारक सिद्धान्त और मार्क्सवादी यूटोपिया) का आख्यान और दूसरा है विज्ञान की विजय का आख्यान। ल्योतार कहता है कि द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद इन सिद्धान्तों ने अपनी विश्वसनीयता खो दी है। वह एकदम सरल शब्दों में उत्तर आधुनिकता को महान् आख्यानों के प्रति अविश्वसनीयता के रूप में परिभाषित करता है। ल्योतार के अनुसार महान् आख्यान ऐसी कहानियाँ हैं जो सत्ता, अधिकार और सामाजिक परम्पराओं को वैधता प्रदान करती हैं।

ल्योतार महान् आख्यानों या महा वृत्तान्त के स्थान पर लघु वृत्तान्त की बहुलता को समकालीन जीवन की विशेषता मानता है। उसके अनुसार स्थानीय स्तर पर ये छोटे-छोटे आख्यान परस्पर प्रतियोगिता करते हुए पूर्णतावादी महाख्यानों को अपदस्थ कर रहे हैं और वर्तमान समय को समझने में अधिक सहायक हो रहे हैं। यह परिघटना-मुक्त सापेक्षता है जिसे अनेक विचारक उत्तर आधुनिकतावाद की मुख्य पहचान मानते हैं। स्थानीय आख्यान और मानव-अनुभव की विविधता में सैद्धान्तिक बहुलता का विचार अन्तर्निहित है। ल्योतार का विरोध महा वृत्तान्तों के पूर्णतावादी चरित्र पर आधारित है। उत्तर आधुनिक समय में रहने का आशय यह है कि अब हम इन महा वृत्तान्तों पर निर्भर नहीं रह सकते, बल्कि यदि हम सर्वसत्तावाद का मुक़ाबला करना चाहते हैं तो हमें कुशलतापूर्वक लघु वृत्तान्तों की रचना करनी होगी। उत्तर आधुनिकता के इसी विचार से दुनिया भर में वंचित और उपेक्षित समुदायों में अस्मिता की चेतना पैदा हुई और आन्दोलन हुए।

5.3.4.02. 'लैंग्वेज़ गेम', ज्ञान और प्रदर्शनकारिता

उत्तर आधुनिकतावाद में ज्ञान के उत्पादन की परम्परागत मान्यताओं को अस्वीकार किया गया है और महा वृत्तान्तों द्वारा प्रस्तुत ज्ञान की प्रामाणिकता पर संदेह प्रकट किया गया। ल्योतार ने विज्ञान को मुक्तिकारी ज्ञान मानने के स्थान पर उसे विट्गेंस्टाइन के 'लैंग्वेज़ गेम' के सिद्धान्त के अनुसार समझने की कोशिश की है। लैंग्वेज़ गेम का तात्पर्य यह है कि कोई भी सिद्धान्त या विचार भाषा को उसकी पूर्णता में उपयुक्त ढंग से ग्रहण नहीं कर सकता, क्योंकि ऐसा करने के प्रयास में उसका अपना 'लैंग्वेज़ गेम' भी उसमें शामिल हो जाता है और विषय उलझ जाता है। ल्योतार 'लैंग्वेज़ गेम' की व्याख्या में कहता है कि इनके नियम स्व-प्रमाणित नहीं होते हैं, बल्कि अन्य खिलाड़ियों के साथ एक समझौते के आधार पर उन्हें वैधता प्राप्त होती है। यदि नियम नहीं है तो खेल भी नहीं है और नियमों में थोड़ा सा परिवर्तन भी खेल को बदल देता है। ल्योतार कहता है कि खेल और भाषा का साम्य यह दिखाने के लिए है कि मनुष्य के जीवन की विविधरूपा गतिविधियों के अन्तर्गत ही शब्दों का वास्तविक अर्थ बनता है। ल्योतार के अनुसार ज्ञान और शक्ति एक ही चीज़ के दो पहलू हैं – जो तय करता है कि ज्ञान क्या है वही यह जानता है कि क्या तय करने की ज़रूरत है। ल्योतार कहता है कि कंप्यूटर के इस युग में ज्ञान सत्ता का प्रश्न बन गया है। ल्योतार के 'लैंग्वेज़ गेम' का उद्देश्य राजनीतिक है जो ज्ञान और शक्ति के सम्बन्धों का उद्घाटन करता है।

भाषा या व्याकरण के नियम खेल के नियमों जैसे ही होते हैं। भाषा में अर्थ उसी तरह आता है जैसे खेल में चालें आती हैं। महा वृत्तान्त इसीलिए विश्वसनीय नहीं रह गए हैं क्योंकि वे एक 'लैंग्वेज़ गेम' के अंग हैं और यह

'लैंग्वेज़ गेम' स्वयं 'लैंग्वेज़ गेम' की बहुलता का एक अंग है। ल्योतार ने 'लैंग्वेज़ गेम' के सम्बन्ध में कहा है कि यह ऐसा खेल है जिसके विशिष्ट नियम हैं और इसे वक्तव्यों के परस्पर जुड़े होने के ढंग के आधार पर समझा जा सकता है। इसलिए हमें न्याय के नियमों का निर्णय किए बिना ही न्याय के लिए संघर्ष करना चाहिए। साथ ही प्रत्येक वक्तव्य को खेल की एक चाल समझना चाहिए। वह कहता है कि एक वैज्ञानिक संदेश का अस्तित्व वक्तव्यों की एक शृंखला में ही होता है जिन्हें तर्क और प्रमाण से सिद्ध किया जाता है। विज्ञान को अपनी वैधता के लिए किसी आख्यान की ज़रूरत नहीं होती है, क्योंकि विज्ञान के नियम इसके खेल में ही विद्यमान होते हैं। विज्ञान की प्रगति के लिए उस क्षेत्र के अन्य वैज्ञानिकों का अनुमोदन आवश्यक होता है। वैज्ञानिक कार्यों की जटिलता बढ़ने के साथ उनके प्रमाण जुटाना भी कठिन और जटिल कार्य हो जाता है। प्रमाण जितने जटिल होंगे प्रमाणीकरण के लिए स्वीकृत स्तर प्राप्त करने की वह प्रौद्योगिकी भी उतनी ही जटिल हो जाएगी।

बीसवीं सदी के अन्तिम दशकों में समाज के वैज्ञानिक ज्ञान को समझने के लिए प्रौद्योगिकी एक महत्त्वपूर्ण मानक है। प्रौद्योगिकी सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन के सिद्धान्त के आधार पर कार्य करती है जिसमें कम से कम निवेश से अधिकतम परिणाम प्राप्त किए जाते हैं। इस प्रक्रिया को ल्योतार 'प्रदर्शनकारिता' (Performativity) कहता है। ल्योतार उत्तर आधुनिकता की मुख्य पहचान महा वृत्तान्तों के अन्त को मानता है। चूँकि विज्ञान को वैधता प्रदान करने के लिए कोई महा वृत्तान्त उपलब्ध नहीं है, इसलिए अब 'प्रदर्शनकारिता' उसे वैधता प्रदान करती है। उसके अनुसार वर्तमान वैज्ञानिक 'लैंग्वेज़ गेम' में इस 'प्रदर्शनकारिता' का बोलबाला है, क्योंकि किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान को प्रमाण की आवश्यकता होती है और प्रमाण के लिए धन लगाना पड़ता है। अब प्रौद्योगिकी प्रमाण जुटाने का सबसे प्रभावी तरीक़ा बन गई है। इस प्रकार धन, कौशल और सत्य के बीच समीकरण स्थापित हो गया है। ल्योतार इस परिघटना को ज्ञान का 'व्यापारीकरण' कहता है। एक बार 'प्रदर्शनकारिता' का प्राधान्य हो गया तो फिर सत्य और न्याय उस अनुसंधान के ही परिणाम होंगे, जिसमें धन का सबसे अधिक निवेश हुआ है। उत्तर आधुनिक समय में प्रौद्योगिकी को बढ़ाने वाले लोग ही यथार्थ को बल प्रदान करते हैं, उन्हीं के अनुसार यथार्थ के उचित और न्यायसंगत होने की सम्भावनाएँ बनती हैं। जिनके पास अनुसंधान के लिए धन होता है उनके पास शक्ति होती है, क्योंकि अनुसंधान के परिणाम उन्हीं की शक्ति बढ़ाने के काम आते हैं। ल्योतार ने बताया है कि उत्तर आधुनिक समय में ज्ञान और शक्ति अभूतपूर्व ढंग से एक-दूसरे के क़रीब आ गए हैं। आख्यानात्मक ज्ञान और वैज्ञानिक ज्ञान में अन्तर ल्योतार के सिद्धान्त का बहुत महत्त्वपूर्ण बिन्दु है और उत्तर आधुनिकता में वैज्ञानिक ज्ञान आख्यानात्मक ज्ञान से अधिक प्रभावी ज्ञान है।

5.3.4.03. हाइपर रीयलिटी अर्थात् यथार्थ की अति और आभासी दुनिया

जॉन फ़िस्के ने अपनी पुस्तक 'मीडिया मैटर्स' (1994) में लिखा है कि उत्तरआधुनिक मीडिया यथार्थ का अमौलिक प्रतिनिधित्व नहीं प्रस्तुत करता है, बल्कि वह उस यथार्थ को पेश करता है जिसका निर्माण भी वही करता है। इस तथाकथित उत्तर आधुनिक समय में सभी महत्त्वपूर्ण घटनाएँ 'मीडिया-घटनाएँ' हैं। अब वास्तविक घटना और उसके मीडिया-प्रस्तुतीकरण में कोई अन्तर नहीं किया जा सकता है। बौद्रिला ने वियतनाम युद्ध की आलोचना के दौरान उत्तर आधुनिक प्रक्रिया के विश्लेषण में बताया है कि प्रगति, प्रौद्योगिकी और तर्कवाद के महा

वृत्तान्तों का स्थान मिथ्याभास की अतियथार्थ दुनिया ने ले लिया है । इस दुनिया में अत्यधिक खर्च तथा विभ्रमकारी प्रदर्शन का साम्राज्य है। ल्योतार की रिपोर्ट 'द पोस्टमॉडर्न कंडीशन' (1970) में ज्ञानोदय से निकले 'महा वृत्तान्तों' की आलोचना में इनके योगदान का स्वीकार भी निहित था, जबकि बौद्रिला की आलोचना में एक नकारात्मक और छिद्रान्वेषी दृष्टिकोण विद्यमान है। बौद्रिला कहता है कि अब यथार्थ और उसके प्रतिनिधित्व में अन्तर मिट चुका है और छलना (Simulacrum) का युग आ गया है । बौद्रिला यहाँ तक कह गया कि अतियथार्थ व्यवस्था को प्रमाणित करने के लिए संकट को भी माध्यम बना देता है। छलना की इस संरचना में मृत्यु तक को समाहित किया जा सकता है, बल्कि यह तक कहा जा सकता है कि मृत्यु हुई ही नहीं। समाज में उत्तर आधुनिकतावाद के सन्दर्भ में बौद्रिला कहता है कि 'कोड' या संकेतों का समय सामाजिक ताने-बाने में समा चुका है। इसका मुख्य लक्षण यह है कि विरुद्धों का पतन आरम्भ हो गया है और सब कुछ अनिश्चय के दायरे में आ गया है। पुनरुत्पादन और मिथ्याभास के युग में यह पता लगाना मुश्किल है कि फ़ैशन में क्या सुन्दर है और क्या असुन्दर, राजनीति में वामपंथ और दक्षिणपंथ में से किसे चुना जाए, मीडिया में सच और झूठ कितना है कौन जाने, संस्कृति और प्रकृति में कौन सी वस्तु उपयोगी है और कौनसी अनुपयोगी कहा नहीं जा सकता, क्योंकि इनमें भेद ख़त्म हो गया है, ये सब एक दूसरे के स्थानापन्न हो गए हैं।

यथार्थ की अति अर्थात् 'यथार्थ से अधिक यथार्थ' प्रौद्योगिकी और मीडिया द्वारा रचित ऐसी अवस्था है, जिसमें यथार्थ के अतिरेकी प्रदर्शन में मनुष्य की यथार्थ-चेतना पर पर्दा पड़ जाता है। इस अवस्था में वस्तुगत सत्य और कल्पित कहानियाँ एकमेक हो जाती हैं, यह पता लगाना मुश्किल हो जाता है कि कहाँ एक ख़त्म जो रहा है और कहाँ दूसरा शुरू हो रहा है। इस अवस्था में भौतिक यथार्थ और आभासी यथार्थ मिल जाते हैं, कृत्रिम बुद्धि और मानव बुद्धि एक-दूसरे में समाहित हो जाती है। लोग आभासी दुनिया के झाँसे में आ जाते हैं, जिससे उनका सामाजिक व्यवहार और जीवन-दशाएँ बदल जाती हैं। बौद्रिला के चिन्तन का मुख्य बिन्दु यह है कि वर्तमान समय की विशेषता संकेतों की सर्व-व्यापी उपस्थिति है । इससे ऐसी स्थिति पैदा हो गई है जहाँ मूल चीज़ का स्थान उसकी नक़ल ने ले लिया है और यथार्थ अतियथार्थ में निमग्न हो गया है। बौद्रिला के अनुसार अतियथार्थ हमारी चेतना को कपटपूर्वक हर लेता है और हमें किसी भी वास्तविक भावनात्मक बन्धन से दूर कर देता है। यह मूलत: खोखले आभास का असीमित पुरुत्पादन है।

बौद्रिला के अनुसार अतियथार्थ की स्थिति यथार्थ के क्षरण की स्थिति है। इस स्थिति में सतह और गहराई तथा वास्तविक और काल्पनिक का भेद समाप्त हो जाता है। अतियथार्थ की दुनिया में छवि और अस्तित्व एकमेक हो जाते हैं। बौद्रिला ने डिज़्नीलैंड के उदाहरण से उस जादुई दृश्य का वर्णन किया है जो वास्तविक की अनुपस्थिति पर पर्दा डाल देता है। वह कहता है कि जैसे कारागार का अस्तित्व यह बात छिपाने के लिए है कि समाज स्वयं एक कारागार है, उसी तरह डिज़्नीलैंड की काल्पनिकता को इसलिए प्रस्तुत किया जाता है ताकि बाक़ी सब वास्तविक लगे, जबकि वस्तु स्थिति यह है कि लॉस एंजिल्स ही नहीं पूरे अमेरिका में कुछ भी यथार्थ नहीं है, चारों ओर अतियथार्थ भरा पड़ा है । इस तरह बौद्रिला हमारे समकालीन जीवन के पण्यीकरण तथा जीवनानुभवों में मीडिया एवं प्रौद्योगिकी के आक्रामक हस्तक्षेप को समझाने में सफल हुआ है।

5.3.4.04. शक्ति (पावर) का विकेन्द्रण अर्थात् शक्ति सर्वत्र है

मिशेल फ़ूको ने शक्ति का एक नया विचार प्रस्तुत किया है। शक्ति सम्बन्धी यह विचार फ़ूको को पश्चिमी सभ्यता की आलोचना के दौरान उपलब्ध हुआ है और इस प्रक्रिया में उसने कुछ नई अवधारणाएँ विकसित की हैं। शक्ति और ज्ञान के समीकरण का निर्माण इसी प्रक्रिया से हुआ है। फ़ूको की शक्ति सम्बन्धी अवधारणा नीत्शे के शक्ति सम्बन्धी उस विचार का विकास है जिसमें पश्चिमी सभ्यता को लोगों को अधीन बनाने की प्रक्रिया के रूप में देखा गया है। मिशेल फ़ूको 'संस्कृति' के विचार का मुख्य आलोचक था। उसने मनुष्य और प्रकृति दोनों को समझने के लिए 'शक्ति' अथवा 'सत्ता' की अवधारणा को तरजीह दी है।

फ़ूको के अनुसार शक्ति की गत्यात्मकता के माध्यम से एक मनुष्य स्वयं को एक विषय में बदल देता है। यह केवल राजनीतिक शक्ति के सन्दर्भ में ही सत्य नहीं है, बल्कि इसमें लोगों द्वारा यौनिकता (sexuality) आदि को शक्ति के रूप में पहचानना भी शामिल है। फ़ूको के अनुसार शक्ति वस्तुत: शक्ति-सम्बन्धों के रूप में पूरे समाज में फैली हुई है। यह समाज की दो या दो से अधिक शक्तियों के बीच ऐसा सम्बन्ध है जिसमें शक्तियाँ परस्पर संघर्षरत रहती हैं और अपने-अपने लाभ और स्थिति के लिए छल-कपट करती रहती हैं। इस सम्बन्ध में ज्ञान का बहुत महत्त्व होता है।

उत्तर आधुनिकतावाद सभी समाजों में व्याप्त उन सत्ता-विमर्शों की खोज करता है जिनके अन्तर्गत समाज के कमज़ोर वर्गों को हाशिये पर धकेल दिया जाता है। ऐसे सत्ता-विमर्श कमज़ोर लोगों को केन्द्र से बाहर करने तक ही सीमित नहीं होते, बल्कि उन लोगों को भी हाशिये पर पटक देते हैं जो इस प्रक्रिया में उनका साथ नहीं देते हैं। उत्तर आधुनिकतावाद केन्द्र या वर्चस्वी विचारधारा के विचार की कड़ी आलोचना करते हुए भिन्नता की राजनीति को बढ़ावा देता है।

फ़ूको ने बताया है कि ज्ञान का अस्तित्व शक्ति के सम्बन्धों में होता है तथा शक्ति को ज्ञान के निर्माण और प्रयोग से अलग नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार फ़ूको ने शक्ति और ज्ञान जैसे दो विचारों को एक अवधारणात्मक रूप प्रदान किया। हम जानते हैं कि मार्क्सवाद के अन्तर्गत शक्ति को विशेष उत्पादन सम्बन्धों के अन्तर्गत वर्ग-विशेष के आधिपत्य को स्थापित करने और उसे बनाये रखने का औज़ार माना जाता है। फ़ूको शक्ति-सम्बन्धों के आर्थिक आधारों को तो स्वीकार करता है लेकिन वह मानता है कि शक्ति-सम्बन्धों की व्यवस्था उत्पादन और आर्थिक सम्बन्धों की स्थापना से बढ़कर होती है। उसके अनुसार शक्ति किसी राज्य के अन्तर्गत संस्थाओं का समूह नहीं है। शक्ति को किसी एक वर्ग का दूसरे वर्ग पर आधिपत्य भी नहीं कहा जा सकता है। यह कोई संरचना नहीं है और न किसी व्यक्ति की विशेषता है। न यह किसी बिन्दु से उद्भूत होती है और न फैलती है। शक्ति तो वस्तुत: सत्ता-सम्बन्धों की बहुलता है। यह सभी जगह व्याप्त है क्योंकि यह सभी जगहों से आती है।

फ़ूको के शक्ति सम्बन्धी विवेचन के कुछ व्यवहारिक उद्देश्य भी हैं। इसके सभ्य और अनुशासित समाज में प्रतिरोध और मुक्ति सम्बन्धी निहितार्थ हैं। फ़ूको की मान्यता है कि शक्ति-सम्बन्ध के बाहर प्रतिरोध की कारवाई नहीं की जा सकती है। मुक्ति इस बात में निहित है कि स्थानीय, खण्डित, अयोग्य और अवैध ज्ञान को ऐसे ज्ञान से मुक्त किया जाये जो स्वयं को पूर्ण और वास्तविक वैज्ञानिक ज्ञान कहता है। इस प्रकार फ़ूको पश्चिमी समाज द्वारा प्रदर्शित आधुनिकता की गम्भीर आलोचना करता है।

शक्ति एक सर्वव्यापक परिघटना है। उत्तर आधुनिकतावाद, विशेष रूप से विखण्डन, युग्मक विरोधों (बाइनरी ऑपॅज़िशन) की सामान्य प्रवृत्ति में छिपे हुए शक्ति-सम्बन्धों के जटिल सूत्रों को सुलझाने का कार्य करता है। प्रत्येक युग्मक में एक शक्ति-सम्बन्ध छिपा हुआ रहता है जो इसे अधिकार-युक्त और अधिकार-वंचित के अनुक्रम में विभाजित करता है। इस तरह सामान्य रूप से समस्या रहित लगने वाले युग्मक, जैसे पुरुष-स्त्री, श्वेत-अश्वेत, अच्छा-बुरा, अमीर-ग़रीब आदि, शक्ति-सम्बन्धों में बंधे हुए हैं। उत्तर आधुनिकतावाद इनके अधिक्रमिक विभाजन के मूल पर प्रहार करता है। उत्तर आधुनिक दृष्टिकोण से भाषा और प्रस्तुतीकरण के अन्य सभी रूप राजनीतिक दृष्टि से विभक्त हैं क्योंकि विचारधारा और विमर्श में बने रहने से बचा नहीं जा सकता। सभी पाठ विमर्शात्मक कार्य हैं। यथार्थ तभी यथार्थ है जब वह किसी पाठ में प्रस्तुत होता है। पाठ के उद्भव का स्रोत लेखक या वक्ता का व्यक्तित्व न होकर वक्तव्य होता है। कलाकृतियाँ हमेशा वक्तव्य के सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक अर्थों से जुड़ी हुई होती हैं और सभी अर्थ शक्ति-सम्बन्धों से जुड़े हुए होते हैं।

5.3.4.05. 'आर्किऑलॅजि' (पुरातत्त्व) और 'जीनिऐलॅजी' (वंशावली)

परम्परागत ऐतिहासिक चिन्तन की कमियों को स्पष्ट करने के लिए फ़ूको 'आर्किऑलॅजि' (पुरातत्त्व) और 'जीनिऐलॅजि' (वंशावली) पदबन्धों का प्रयोग करता है। वह अपनी नूतन ऐतिहासिक विधि को निर्वैयक्तिक और वस्तुनिष्ठ विश्लेषण बनाने की दृष्टि से उसे 'पुरातत्त्व' कहता है। इस विधि का उद्देश्य ऐतिहासिक घटनाओं की व्याख्या करना नहीं है, बल्कि केवल उनका वर्णन करना है। वह इतिहास के लिखित रूप अर्थात् दस्तावेज़ों के विस्तृत और तथ्यपरक विमर्श के स्थान पर वक्तव्य को ऐतिहासिक अध्ययन का आधार बनाने का प्रस्ताव करता है। फ़ूको के विश्लेषण में ऐतिहासिक प्रवाह में न कोई उद्गम का क्षण है और न ही उद्देश्यपरक गतिविधियाँ हैं। उसके अनुसार इतिहास में बिखराव, असमानता और भेदभाव है, जिसे परम्परागत ऐतिहासिक चिन्तन ने ढक दिया था। वह तथाकथित अतीत की अटूट निरन्तरता की दरारों और विघटन के बिन्दुओं की पहचान करता है और ऐतिहासिक घटनाओं में अन्तर्निहित बिखराव को संरक्षित करने का प्रयास करता है।

'जीनिऐलॅजि' परम्परागत ऐतिहासिक विवेचन का विरोध करती है। इसका उद्देश्य घटनाओं की विशेषताओं का लेखा-जोखा रखना है और वर्चस्व के विभिन्न रूपों को सामने लाना है। 'जीनिऐलॅजी' व्याख्याओं की अन्तहीन प्रक्रिया है क्योंकि चीज़ों का कोई गुप्त अर्थ या आधार नहीं होता है, बल्कि व्याख्याओं की परतें होती हैं जो जमा होते-होते यथार्थ का रूप ग्रहण कर लेती हैं। इन परतों को उघाड़ना 'जीनिऐलॅजी' का कार्य है। 'जीनिऐलॅजि' ज्ञान, विशेष रूप से ऐतिहासिक ज्ञान, के परिप्रेक्ष्य की अवधारणा है। फ़ूको के अनुसार

जिसे हम यथार्थ कहते हैं वह ज्ञान के विषय से इतर असंख्य कारकों का उत्पाद है, अत: यह एक निर्मिति है। फ़ूको की 'जीनिऐलॅजि' की अवधारणा ज्ञान और सत्ता (पावर) को समझने में बहुत सहायक है। ज्ञान और सत्ता के जटिल सम्बन्धों का विश्लेषण करते हुए फ़ूको इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि वस्तुगत ज्ञान को सामान्यत: जिस रूप में जाना जाता है, वह वास्तव में जटिल सत्ता-तंत्र के बदले हुए विमर्श हैं। ज्ञान की सम्भावना की दशाएँ सर्व-व्यापी सत्ता की कार्यवाहियों के साथ अभिन्न रूप से जुड़ी हुई हैं।

5.3.4.06. अनिश्चयात्मकता

अनिश्चयात्मकता दो या दो से अधिक परस्पर प्रतिस्पर्द्धी व्याख्याओं के निर्णय की असम्भावना की स्थिति है। परम्परागत चिन्तन में विरोधाभासों के लिए स्थान नहीं है; कोई भी वस्तु एक ही साथ 'क' है और 'क' नहीं है, ऐसा नहीं हो सकता है। उत्तर आधुनिकता में इस नियम को चुनौती दी गई है। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति कहता है की वह झूठ बोल रहा है तो हम कैसे कह सकते हैं कि वह झूठ बोल रहा है या सच ? इस तरह के कथनों की वैधता के बारे में निर्णय करने की हमारी योग्यता, अस्थाई रूप से ही सही लेकिन, स्थगित रहती है। पारम्परिक चिन्तन के अनुसार झूठ का यह विरोधाभास विरोधाभासी कथनों का एक अलग-थलग और विशिष्ट दृष्टान्त है। इसके विपरीत उत्तर आधुनिकतावाद में माना गया है कि विरोधाभासों के नियम का स्थगन कुछ विशिष्ट लोगों या क्षेत्र-विशेष तक सीमित है। उत्तर आधुनिकतावाद सभी निरपेक्ष मूल्यों – जैसे ईश्वर, सत्य, तर्क, क़ानून आदि पर प्रश्न खड़े करता है, उन पर पुनर्विचार करता है और नए ढंग से उनकी व्याख्या करता है। वह निर्णय करने की सम्भावना को सिरे से ख़ारिज़ नहीं करता, बल्कि अनिश्चयात्मकता को नया मूल्य और महत्त्व प्रदान करता है।

नई समीक्षा में जिसे विरोधाभास (Paradox) या वक्तोक्ति (Ambiguity) कहा जाता था, उत्तर आधुनिकतावाद उसे अनिश्चयात्मकता कह कर उसमें एक नया अर्थ भरता है। अन्तर सिर्फ़ इतना है कि जहाँ नई समीक्षा में साहित्यिक रचना की भाषा में अन्तर्निहित बहुलार्थक सम्भावनाओं की खोज और रचना के पाठ की एकता के लिए विरोधाभास या वक्तोक्ति का प्रयोग किया जाता था, वहाँ उत्तर आधुनिकतावाद अनिश्चयात्मकता के माध्यम से एकता के सिद्धान्त को ही चुनौती देता है। यहाँ बहुलता, विविधता और भिन्नता को महत्त्व दिया जाता है। अनिश्चयात्मकता पाठ को बिखेरती है, उसे अस्त-व्यस्त करती है। यह साहित्यिक रचना के पाठ में से एक अन्तिम अर्थ के सिद्धान्त को नकार कर अर्थ की सीमाओं को तोड़ देती है। देरिदा के अनुसार उत्तर आधुनिकता में कोई निश्चय या निर्णय नहीं है, न ही कोई राजनीतिक और नैतिक ज़िम्मेदारी है। यहाँ अनिश्चय ही निर्णय है।

5.3.4.07. नया ज्ञानोदय

उत्तर आधुनिकतावाद का मुख्य ध्यान अनिश्चयात्मकता से उत्पन्न पाठ के रूपान्तरों पर रहता है। निश्चय से परे हो जाने के कारण पाठ के प्रति कोई रुख़ या मत नहीं बन पाता है। यह एक तरह की अराजकता और शून्यता की स्थिति होती है। लेकिन उत्तर आधुनिक विचारकों के अनुसार पूर्व प्रचलित एकायामी और अविचारित

राजनीतिक, नैतिक और पाठगत निर्णयों के कारण मानवता को असंगत और घातक परिणाम देखने पड़े हैं। लोकोत्तर व्याख्याओं पर आधारित व्यवस्थाओं (ईश्वर, राष्ट्रीयता या ऐतिहासिक भौतिकवाद आदि) में विश्वास के कारण ही मानव इतिहास में आतंक, दमन और अत्याचारों का काला अध्याय लिखा गया। इन विचारों में ऐसे तत्त्व विद्यमान हैं जो अतिवादी व्यवहारों को मान्यता देते हैं। उत्तर आधुनिकतावादियों का तर्क है कि बुद्धि और विवेक का इस्तेमाल हर तरह के दमन को वैधता प्रदान करने के लिए किया गया है। स्टालिन के आतंक के पीछे भी मार्क्स के सिद्धान्तों के वैज्ञानिक विकास की आड़ में यह विवेक उपस्थित था। साम्राज्यवादी और नस्लीय हिंसा के पीछे भी ऐसे ही एकायामी सिद्धान्तों की भूमिका थी।

फ्रैंकफ़र्ट स्कूल के प्रमुख चिन्तकों – अडॉर्नो और होर्खेमर ने ज्ञानोदय को सर्वसत्तावादी कहा था। ज्ञानोदय पाश्चात्य जगत् में आधुनिकता और वैज्ञानिक उपलब्धियों के समर्थन का समग्र चिन्तन कहा जा सकता है। ज्ञानोदय मनुष्य के अन्धविश्वास और प्रकृति की शक्तियों पर बुद्धि और विवेक की शक्ति के दावों का चिन्तन है। माना गया कि बुद्धि और विज्ञान ज्ञान के अनन्त द्वार खोल देंगे और दुनिया की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रगति तथा मानव-मुक्ति के साधन बनेंगे। उत्तर आधुनिकतावाद ने इन दावों को ख़ारिज़ करते हुए इन सिद्धान्तों को ही अपूर्ण और प्रगति-विरोधी करार दिया। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उत्तर आधुनिकतावाद अतार्किकता और अविवेक का समर्थन करता है। इसे तर्कहीन और तर्कसंगत के विरोध के स्थगन और विखण्डन के रूप में समझा जा सकता है। अतार्किकतावाद अपने आप में तर्कवाद का ही एक अन्य रूप है क्योंकि यह अपने अर्थ के लिए अपने विरोधी पर निर्भर है। जैसा कि देरिदा कहता है कि उत्तर आधुनिकता 'नया ज्ञानोदय' है जो उन विधियों के महत्त्व और मूल्य की खोज से सम्बन्धित चिन्तन है जिन्हें तार्किक और अतार्किक के मध्य विरोध के रूप में छोटा या सीमित नहीं किया जा सकता।

5.3.4.08. प्रसार या विसरण

उत्तर आधुनिकता समग्रतावादी शक्तियों का प्रतिरोध करती है अर्थात् यह खण्डवादी है। खण्डवाद कोई नया विचार नहीं है, लेकिन उत्तर आधुनिकतावाद खण्ड और समग्रता के विचारों की नई आलोचना प्रस्तुत करता है। इसने मौलिकता की धारणा को प्रश्नांकित किया और अन्तर-पाठीयता, उद्धरण-उल्लेख, नक़ल और हास्यानुकृति पर ध्यान केन्द्रित किया। इस प्रकार सदियों से सौन्दर्यशास्त्रीय महत्त्व प्राप्त 'मौलिकता' को एक तरह की वैचारिक जड़पूजा (Fetish) के रूप में देखा गया जिसका सौन्दर्यात्मक निर्णयों में कोई योगदान नहीं होता है। उत्तर आधुनिक खण्डता किसी खोई हुई मौलिक एकता की सम्भावना पर निर्भर नहीं है। इस खण्डता को 'प्रसार' या विसरण के पारिभाषिक अर्थ में भी समझा जा सकता है। प्रसार या विसरण का अर्थ होता है किसी वस्तु का बिखरना या फैलना, यह बिखराव या फैलाव स्रोतों और लक्ष्यों का, अस्मिता और केन्द्र का होता है। उत्तर आधुनिक अर्थ में प्रसार स्रोत रहित प्रसार है, इसमें किसी केन्द्र या उद्देश्य का आश्वासन नहीं है।

फ़ूको अपनी पुस्तक 'द आर्किओलॉजी ऑफ नॉलेज' में प्रसार की संरचनाओं पर विचार करता है। ये संरचनाएँ 'व्यक्ति' और 'विषय' को जन्म देती हैं तथा 'ज्ञान के आधिपत्य' का आधार तैयार करती हैं। विसरण

या प्रसार में 'भिन्नताओं' का कुछ ऐसा संश्लेषण होता है कि भिन्नताओं का अस्तित्व बना रहता है लेकिन उनमें कोई एकरूपता नहीं दिखाई देती है।

विसरण या प्रसार को किसी वक्तव्य की संरचना द्वारा समझा जा सकता है। एक वक्तव्य किसी वाक्य को अर्थ प्रदान करता है। वाक्य का एक व्याकरण होता है लेकिन वक्तव्य का कोई व्याकरण नहीं होता है। एक वक्तव्य दूसरे वक्तव्य का सन्दर्भ देता है। इस प्रक्रिया में वक्तव्यों की स्थिति बदल जाने से उनके भावार्थ भी बदल जाते हैं। अत: किसी वक्तव्य की पुनरावृत्ति ठीक उसी रूप में नहीं हो सकती, लेकिन वक्तव्य के मूल भाव को सुरक्षित रखते हुए उसे अनेक प्रकार से अभिव्यक्त किया जा सकता है। विसरण की इसी संरचना का अध्ययन ही 'शक्ति' और राजनीति का अध्ययन है। समाज में विद्यमान शक्ति सम्बन्धों में कोई निरन्तरता या तरतीब नहीं होती है। इसलिए इन सम्बन्धों से कृत्रिम पहचान और कृत्रिम सम्बन्धों का जन्म होता है। शक्ति-सम्बन्ध किसी स्थायी सम्बन्ध के स्थान पर ऐसी पहचानों को जन्म देते हैं जिनकी अपनी पहचान तक धूमिल होती है। इस प्रकार, शक्ति-सम्बन्ध एक ऐसा घटनापूर्ण क्षेत्र निर्मित करते हैं जिसमें शक्ति का विश्लेषण ऐतिहासिक अथवा विश्लेषणात्मक न होकर वंशानुगत हो जाता है।

5.3.4.09. छलना और मिथ्याभास

पाश्चात्य दर्शन और सौन्दर्यशास्त्र की परम्परा में यथार्थ और उसकी नक़ल में सदैव अन्तर किया गया है। इससे यथार्थ और उसकी नक़ल के बीच पदानुक्रम पर आधारित विरोध उत्पन्न हुआ। यह विरोध प्राकृतिक और कृत्रिम की भिन्नता के समान था। उत्तर आधुनिकता ने इस तरह के पदानुक्रम को चुनौती दी। बौद्रिला ने नक़ल की इस परिघटना को मिथ्याभास (Simulation) के रूप में परिभाषित किया है। मिथ्याभास प्रतिनिधित्व के विरोधी के रूप में प्रस्तुत किया गया पदबन्ध है। भाषाविज्ञान में संकेतक और संकेतित या शब्द और शब्द-छवि में जो अन्तर होता है, वही अन्तर स्वाँग या मिथ्याभास और प्रतिनिधित्व में है। हम जानते हैं कि एक वास्तविक पेड़ और उस पेड़ के चित्र में अन्तर होता है। इसके विपरीत मिथ्याभास (Simulation) इस अन्तर को मिटा देता है। कंप्यूटर, टेलीविज़न, विज्ञापनों, पत्रिकाओं, अख़बारों आदि में प्रस्तुत छवियों से आच्छादित 'यथार्थ' नक़ल के बिना अकल्पनीय लगता है। इससे यह अर्थ निकलता है कि नक़ल किसी वास्तविक वस्तु (यथार्थ) की नक़ल नहीं है क्योंकि नक़ल की सार्थकता और प्रभाव से यथार्थ अभिन्न है अर्थात् यथार्थ को नक़ल से अलग नहीं किया जा सकता। मीडिया और विज्ञापन एक ख़ास ब्राण्ड और वस्तु को हमारे चेतन-अवचेतन में इस तरह स्थापित कर देते हैं कि जब हम वास्तविक वस्तुओं का उपभोग करते हैं तब भी विज्ञापन द्वारा रचित छवि ही हमारे आस्वादन और संतुष्टि का मुख्य कारण बनती है, न कि यथार्थ वस्तु। इस परिघटना से एक ऐसी दुनिया का निर्माण होता है जिसे बौद्रिला 'अतियथार्थ' (Hyper-real) कहता है।

अतियथार्थ में यथार्थ गढ़ा जाता है, वह कल्पना से निर्मित होता है। स्वाँग या मिथ्याभास भौतिक दुनिया में घटित नहीं होता है। यह भौतिक सीमाओं से परे हमारे मन-मस्तिष्क के भीतर या प्रौद्योगिकीय मिथ्याभास आदि के रूप में घटित होता है। छलना (Simulacrum) को मूल रहित एक नक़ल कहा जाता है। बौद्रिला कहता है कि

छलना (Simulacrum) यथार्थ की नक़ल नहीं होती है, बल्कि स्वयं ही यथार्थ बन जाती है। वह छलना के उद्भव के चार चरण बताता है – पहले पहल यह यथार्थ का मूलभूत प्रतिबिम्ब होती है, फिर यथार्थ की विकृति बन जाती है। तीसरे चरण में छलना यथार्थ के दिखावे का रूप ले लेती है जिसमें कोई प्रतिरूप नहीं होता है , और अन्त में वह मिथ्याभास मात्र रह जाती है जिसका किसी भी तरह के यथार्थ से कोई लेना-देना नहीं होता है।

5.3.4.10. विमर्श

विमर्श को पाठ, वाक्य, विचारधारा, वक्तव्य आदि विभिन्न पदबन्धों से भेद के आधार पर परिभाषित किया जाता है। भाषिक संचार के रूप में विमर्श वक्ता और श्रोता के मध्य ऐसी अन्तर्वैयक्तिक गतिविधि माना जाता है जिसके रूप का निर्धारण इसके सामाजिक प्रयोजन के अनुसार होता है। फ़ूको इस धारणा का खण्डन करता है कि ज्ञान लोगों के विचारों की अभिव्यक्ति है। फ़ूको के अनुसार विमर्श सुस्पष्ट प्रस्थापनाओं का संग्रह नहीं है। यह किन्हीं गुप्त मनोवैज्ञानिक या ऐतिहासिक विचारों का समूह भी नहीं है। यह उन सभी सम्बन्धों का समूह है जिसमें इन सब को अर्थ प्राप्त होता है। फ़ूको के अनुसार विमर्श नियंत्रण, प्रतिबन्ध, स्वीकार्यता, अनुमेयता और अस्वीकार के विविध माध्यमों के रूप में कार्य करता है। किसी भी विमर्श में इस बात की सम्भावना होती है कि मूल विषय, विषयी और स्वयं उसके ज्ञान का आधार ही बदल जाये।

विमर्श ऐसे वक्तव्यों का समूह होता है जो परस्पर पूर्वानुमेय ढंग से जुड़े हुए होते हैं। विमर्श एक निश्चित नियमावली से संचालित होता है जो विशेष उक्तियों और वक्तव्यों का सम्प्रेषण और वितरण करते हैं। कुछ वक्तव्यों का व्यापक सम्प्रेषण और वितरण होता है, जबकि कुछ का कम। फ़ूको के विमर्श की अवधारणा में अपवर्जन अर्थात् पीछे छोड़ देने का विचार बहुत महत्त्वपूर्ण है। विमर्श कुछ संगत वक्तव्यों की व्यवस्था से बढ़कर ऐसे जटिल व्यवहारों का समूह है जो समाज में लगातार व्यापक रूप में बने रहते हैं। ये व्यवहार ऐसे दूसरे व्यवहारों को वितरण से बाहर करने में लगे रहते हैं जो इन्हें अमान्य करने की कोशिश करते हैं। फ़ूको के अनुसार विमर्श शक्ति-सम्बन्धों से जुड़ा हुआ होता है। अपनी पुस्तक 'history of Sexuality' (1978) में वह लिखता है – "विमर्श हमेशा शक्ति के आगे झुके हुए या उसके सामने उठ खड़े हुए लोगों की चुप्पियों से अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। हमें उन जटिल और अस्थिर प्रक्रियाओं का ध्यान रखना चाहिए जिससे विमर्श सत्ता का एक औज़ार और प्रभाव दोनों बन सकता है, लेकिन वह सत्ता के लिए एक बाधा, एक व्यवधान, प्रतिरोध का एक सूत्र और विरोध की रणनीति का प्रस्थान बिन्दु भी बन सकता है। विमर्श सत्ता का प्रसार और उत्पादन करता है, वह इसे बल देता है, लेकिन वह इसकी उपेक्षा भी करता है और इसे अनावृत्त भी करता है, वह इसे कमज़ोर बनाता है और इसे विफल करने की सम्भावना पैदा करता है।"

विमर्श शब्द पर चर्चा करते हुए हमें एक बात हमेशा याद रखनी चाहिए कि यह भाषा का समकक्ष नहीं है। हमें यह भी नहीं मान लेना चाहिए कि विमर्श और यथार्थ के बीच सरल सम्बन्ध होता है। विमर्श भाषा का यथार्थ में केवल रूपान्तरण नहीं करता, बल्कि यथार्थ को देखने-समझने के हमारे तरीक़ों की संरचना भी करता है।

5.3.5. पाठ का सारांश

उत्तर आधुनिकतावाद आधुनिकता और ज्ञानोदय के प्रति संदेह प्रकट करता है, जिसमें माना जाता है कि सत्य और असत्य के बीच फैसला करने के लिए विवेक पर भरोसा किया जा सकता है। यह परम्परागत मानववाद और प्रगति के विचारों को अस्वीकार करता है। इसकी पहचान मीडिया और प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में अभूतपूर्व विकास से की जाती है। उपभोक्तावाद के रूप में फैली सम्पन्नता, जिसे इस तरह दिखाया जाता है कि मानो यह अनन्त काल तक विद्यमान रहेगी, उत्तर आधुनिकता का लक्षण है। नैतिकता और जीवन-शैली सम्बन्धी मान-मूल्यों की बहुलता उत्तर आधुनिकतावाद का एक मुख्य लक्षण है, जिससे किसी केन्द्रीय सामाजिक सत्ता का क्षरण दिखाई देता है। बौद्रिला कहता है कि ज्यों ही हम भौतिक वस्तुओं के उत्पादन को पीछे छोड़कर शक्ति का नियंत्रण करने वाली 'छवियों और सूचनाओं के उत्पादन' की दुनिया में प्रवेश करते हैं, हम उत्तर आधुनिक दुनिया में प्रवेश करते हैं।

5.3.6. उपयोगी सन्दर्भ

5.3.6.1. हिन्दी की पुस्तकें

1. चतुर्वेदी, जगदीश्वर. (2004). उत्तर आधुनिकतावाद. नई दिल्ली. स्वराज प्रकाशन. ISBN : 81-8599-959-7

2. नवीन, देव शंकर. मिश्र, सुशान्त कुमार (सं.). (2000). उत्तरआधुनिकता : कुछ विचार. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN : 978-93-5000-942-0

3. पचौरी, सुधीश.(2000). उत्तर-आधुनिक साहित्यिक विमर्श. नई दिल्ली. वाणी प्रकाशन. ISBN : 81-7055-485-3

4. सिंहल, डॉ॰ बैजनाथ. (2003). उत्तर आधुनिकता : स्वरूप और आयाम. पंचकूला. हरियाणा साहित्य अकादमी.

5.3.6.2. अंग्रेज़ी पुस्तकें

1. Butler, Christopher. (2002).Postmodernism: A Very Short Introduction. New York. Oxford University Press. ISBN : 0–19–280239–9

2. Connor, Steven(ed.).(2004).The Cambridge Companion to Postmodernism. Cambridge, UK. Cambridge University Press. ISBN : 978-0-511-22173-6

3. Lodge, David & Wood, Nigel (ed).(2007). Modern Criticism and Theory : A Reader . New Delhi. Dorling Kindersley (India) Pvt. Ltd. ISBN : 978-81-317-0721-0

4. Sarup, Madan.(1993). An Introductory Guide to Post-Structuralism and Postmodernism. London. Harvester Wheatsheaf. ISBN : 0-7450-1360-0

5. Sim, Stuart (ed.).(2001). The Routledge Companion to postmodernism. London and New York.Routledge. ISBN : 0-415-24308-4

5.3.7. अभ्यास के लिए प्रश्न

1. आधुनिकता का अर्थ बताइए।

2. आधुनिकता की मुख्य विशेषताओं की समीक्षा कीजिए।

3. आधुनिकता और उत्तर आधुनिकता में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

4. उत्तर आधिकतावाद के इतिहास पर टिप्पणी कीजिए।

5. उत्तर आधुनिक संस्कृति और उत्तर आधुनिक सैद्धान्तिकी में क्या अन्तर है ?

6. उत्तर आधिकतावाद की मुख्य अवधारणाओं पर एक निबन्ध लिखिए।

7. "मिशेल फ़ूको का शक्ति-विवेचन सत्ता-विमर्शों की खोज करता है"। समझाइए।

8. महा वृत्तान्तों की अविश्वसनीयता क्या है ?

9. छलना और मिथ्याभास की अवधारणाओं को स्पष्ट कीजिए।

10. ज्ञान और प्रदर्शनकारिता की व्याख्या कीजिए।

उपयोगी वेबसाइट्स :

01. http://epgp.inflibnet.ac.in/ahl.php?csrno=18
02. http://www.hindisamay.com/
03. http://hindinest.com/
04. http://www.dli.ernet.in/
05. http://www.archive.org